International Journal of Applied Research 2018; 4(11): 252-254

ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 5.2
IJAR 2018; 4(11): 252-254
www.allresearchjournal.com
Received: 22-09-2018
Accepted: 25-10-2018

माला कुमारी
शोध–छात्रा, विश्वविद्यालय हिन्दी–विभाग, ल.ना.मिथिला विश्वविद्यालय, दरभंगा, बिहार, भारत

Correspondence
माला कुमारी
शोध–छात्रा, विश्वविद्यालय हिन्दी–विभाग, ल.ना.मिथिला विश्वविद्यालय, दरभंगा, बिहार, भारत

'असगर' वजाहत की कहानियों में नारी अस्मिता की तलाश

माला कुमारी

सारांश
हिन्दी कहानी साहित्य में लगभग सभी कहानीकारों ने स्त्री समस्या को अपनी कहानी में रखने का काम किया है। वजाहत साहब अपनी कहानियों में स्त्रियों की समस्या, पीड़ा, बेबसी, जुर्म आदि, को व्यंग्य के माध्यम से रखने का सार्थक प्रयास किया है। उन्होंने हमारे समाज की पुरुष वर्चस्ववादी मानसिकता के स्त्रियों के प्रति दोहरे मानदंडों को रेखांकित किया है। उसने अन्य कहानीकारों की तरह स्त्री–विमर्ष संबंधित बहुत कहानियाँ नहीं लिखि है। पर जो कहानियाँ लिखी हैं, वह विमर्ष के लिए पर्याप्त हैं।

मूल शब्दः असगर, स्त्रियों की समस्या, स्त्री–विमर्ष

प्रस्तावना
असगर वजाहत की कहानियाँ निरंतर युग की विभीशिकाओं से भीड़ते हुए आगे बढ़ते हैं, इसलिए उसमें समाज के हर वर्ग के लोग सम्मिलित हो जाते हैं, जो किसी न किसी रूप में प्रताड़ित हैं या अपने काल की परिधि से धकेल दिए गए हैं। असगर साहब ने किसी खास विमर्ष को लेकर कहानियाँ नहीं लिखी है, लेकिन उनकी कहानियों में सभी प्रकार के विमर्ष मिल जाते हैं। उन्होंने स्त्री से संबंधित बहुत ज्यादा कहानियाँ नहीं लिखी, पर जो कहानियाँ उन्होंने लिखी है। नारी की बेबसी को अभिव्यक्त करने के लिए काफी है। इससे संबंधित इन्होंने अनेक कहानियाँ लिखीं हैं जैसे–'ड्रेन में रहने वाली लड़कियाँ', 'लड़कियाँ', 'अपनी–अपनी पत्नियों का सांस्कृतिक विकास' जिसको इस संदर्भ में देखा जा सकता है।
दरअसल आज भी पुरुष स्त्रियों के प्रति परंपरागत सोच के शिकार हैं। पितृसत्तात्मक समाज व्यवस्था में लड़कियों के प्रति दोहरे मानदंडो का प्रयोग किया जाता है। पितृसत्ता केवल स्त्री–पुरुष संबंधों का मामला नहीं है, बल्कि पूरी समाज व्यवस्था का मामला है। वे औरतों को शारीरिक और भावनात्मक रूप से निकृष्ट मानते हैं, उन्हें जीतने में विश्वास रखते हैं। पुरुष औरतों को अपनी ओर आकृष्ट कर लेना पौरूष की कसौटी मानता है, जबकि आज औरतें अपने शरीर और मन की सीमित दायरे से बाहर निकल गई हैं। वह पुरुष से हारने को अपनी स्त्रीत्व की सार्थकता नहीं समझती हैं। अतः वह सृष्टि की एक स्वतंत्र इकाई के रूप में अपनी बुद्धिमता, क्षमता के बल पर जिन्दगी जीना चाहती है। हालाँकि, पुरूषवादी स्वामित्व की मानसिक कुण्ठाओं का उन्हें पर्याप्त शिकार होना पड़ता है। प्रसिद्ध लेखिका रमणिका गुप्ता कहती हैं–'मातृसत्ता की समाप्ति के बाद स्त्री की गुलामी पितृसत्ता का परिणाम है। विवाह उस गुलामी की शुरुआत है तो परिवारिक बन्धन उसका पिजड़ा है, जिसमें वह केवल सदियों से अनुशासन के नाम पर कैद है।'[1]
असगर वजाहत की एक कहानी है' 'लड़कियाँ' जिसमें उन्होंने हमारे समाज में हो रहे दहेज हत्या की समस्या को उठाया है। कहानी श्रृंखला शैली में लिखा गया है। लड़कियाँ कहानी हमारे समाज की उस अभिशाप को सामने लाती है, जिसमें हर दिन दहेज के लिए किसी न किसी लड़की को जला कर मार दिया जाता है, या आत्महत्या के लिए उकसाया जाता है। छोटी सी कथा श्रृंखला के माध्यम से लेखक ने नारी जीवन की बहुत ही गंभीर विश्लेषण करते हुए, हमारे समाज व्यवस्था के घिनौने यथार्थ को व्यंग्यात्मक शैली में प्रस्तुत किया है। पाखण्ड से भरा हमारे इस समाज में बेटी कर जन्म के जुर्म में माँ–बाप को दण्ड स्वरूप दहेज देना ही पड़ता है। पिसत्तात्मक समाज में जहाँ दहेज लेना प्रतिष्ठा, सम्मान का कारण माना जाता हो, वहाँ यह कोई बड़ी बात नहीं है। यह कहानी मात्र श्यामा की ही नहीं है, उन सभी नव विवाहिता का है जिन्हें दहेज के लोभ में जला कर मार दिया गया है। माँ–बाप अपनी बेटियों को अपना पूरा का पूरा धन देकर कन्यादान कर देते हैं। लेकिन धन की हवस में उसे पति तथा उनके परिवार वाले का दुतकार ही मिलता है।

पति को परमेश्वर का दर्जा देने वाले हमारे समाज में स्त्रियों के प्रति ज्यादतियाँ बरकरार है। ''पति परमेश्वर होते हैं। वे जलते नहीं, केवल जलाते हैं।''[2] सारी व्यवस्था इस मसले से अवगत होने के बाबजूद भी हमारी कानून व्यवस्था मौन है। हमारे देश में आज भी लड़कियों को पैदा होते ही मार दिया जाता है। इस कहानी की श्रृंखला दो में जब श्यामा की जली हुई लाश थाने पहुँचती है, तो उससे पहले दो नवविवाहिता लड़कियों की जली हुई लाशें रखी रहती हैं। दरोगा जी को खबर मिलती है तो पूजा–पाठ इत्यादि कर के बाहर निकलते हैं और श्यामा की लाश को देखकर बोलते हैं–''यार ये लोग एक दिन में एक ही लड़की को जला कर मारा करें। एक दिन में तीन–तीन लड़कियों की जली लाशें आती हैं। कानूनी कार्यवाही भी ठीक से नहीं हो पाती ।''[3] ये सिर्फ कहानी नहीं है ये हमारी समाज की सच्चाई, जिसमें न जाने हर रोज कितनी लड़कियाँ इसकी शिकार होती है।

श्यामा की लाश जब अदालत पहुँचती है, अपनी बयान दर्ज कराने तो उनकी शिकायत को बेबुनियाद करार दिया जाता है। अपने साथ हुए अन्याय की भोक्ता होने के बाबजूद कोई उनकी बात नहीं सुनता। अतः उन्हें इन्साफ नहीं मिलता। हमारे देश की कानून व्यवस्था किसी से छिपी हुई नहीं है। ''श्यामा ने कहा–मेरा बयान दर्ज किया जाए।'' अदालत ने कहा–''अदालत तुम्हारा बयान दर्ज नहीं कर सकती क्योंकि तुम जल कर मर चुकी हो।''[4] स्त्री सशक्तिकरण का आवाज बुलंद करने वाला हमारा समाज आखिरकार स्त्री की बदहाली के खात्मा के लिए कुछ भी नहीं करते। श्यामा की लाश, थाने, अदालत, प्रेस, प्रधानमंत्री सचिवालय, स्कूल, पंडित जी के घर, मानव अधिकार समिति, यहाँ तक की भगवान के पास भी लड़कियों को इन्साफ नहीं मिलता है। स्त्री मुक्ति का प्रश्न परिवार में स्त्री–पुरुष के संबंध के स्तर से उठाना चाहिए। लेकिन सवाल यह है कि प्रश्न उठाएगा कौन, जाहिर है मुक्ति चाहने वाला ही मुक्ति का प्रश्न उठाएगा। मुक्ति के लिए आवाज उठाने के क्रम में बाधाओं से टकराना ही नहीं लहूलुहान भी होना पड़ेगा, तभी इस भयंकर अंधकार से निकलने का रास्ता बन पाएगा। कहानी में लेखक का मंतव्य है–श्यामा को ही बोलना होगा– ''बोलो, श्यामा बोलो.....बोलो.....जब तक तुम नहीं बोलोगी, हमारी आवाज कोई नहीं सुनेगा।''[5] लड़कियाँ जब तक अपने पक्ष में खड़े होने का हौसला रखते हुए अन्याय के प्रतिकार के लिए आवाज नहीं उठाएगी तभी तक उनकी स्थिति में बदलाव नहीं आएगा।

इसी से संबंधित उनकी कहानी है–'ड्रेन में रहने वाली लड़कियाँ' यह कहानी समाज के निरंतर अमानुशिक और क्रूर होते जाने की लेखक नें अपनी लेखनी चलायी है। लेखक ने समसामयिक भयावह सच को फैंटेसी के साथ जोड़कर संसार से लड़कियों के गायब हो जाने तथा नालियों में आबाद होते जाने की कल्पना के सहारे पुरुषवादी मानसिकता पर प्रहार किया गया है। यह कहानी उत्तर आधुनिक दौर की है। इस कहानी में कहानीकार ने स्त्री की बदनसीबी, बेबसी को रेखांकित करते हुए पुरुष समाज के लिए एक चेतावनी भी जाहिर करते हैं। पितृसत्तात्मक स्वामित्व को स्त्री झेल ही रही है, और उपभोक्तावादी संस्कृति की नई नग्न निरंकुशता का भी वह शिकार बनती है। नारी–द्रोही दृष्टिकोण और पुरुष वर्चस्ववादी ही इन सब के मूल में हैं। इस कहानी को भ्रूण हत्या से जोड़कर देखा जा सकता है। हमारे समाज में भ्रूणहत्या आज भी उतनी ही तेजी से हो रही जितने की पहले होते थे। सरकार चाहे 'बेटी बचाओ बेटी पढ़ाओ' का कितना भी नारा लगा लें, पर हमारे यहाँ जमीनी हकीकत कुछ और ही हैं। लेखक ने इस कहानी में एक ऐसे भयावह समय की ओर इशारा किया है। जहाँ संसार से लड़कियाँ गायब है। यह कल्पना अतिश्योक्ति–सी लग सकती है परंतु जिस प्रकार हमारे समाज में बेटी के जन्म को दुःख की नजरों से देखा जाता है, शोक मनाया जाता है, उस समाज का ऐसे भविष्य हों तो इसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं है। कहानी में एक माँ अपनी ही बेटी को मौत के मुँह में झोक देती है, उनकी विवशता भरी पीड़ा को लेखक ने व्यक्त किया है, जो रोंगटे खड़े करने वाले हैं। ''सरला बच्ची को लेकर उठी, बाथरूम गई। बच्ची को 'पाट' में डाला और जंजीर चला दी। यह देखने के लिए नहीं रूकी कि बच्ची फ्लश के पानी से बहकर गटर में गई या नहीं। हाँ उसने एक हिचकी जैसी आवाज जरूर सुनी थी। उसने सोचा, यह तो मामूली आवाज है। अगर वह बच जाती तो उसके रोने से धरती फट पड़ती।''[6] सरला को जब अदालत में बुलाया गया तो उसने माना कि उन्होंने अपनी बच्ची को मारा और उसने यह अपनी बच्ची के सुन्दर भविष्य के लिए किया था जो हर माँ–बाप का काम होता है। क्योंकि उसे पता था कि बच्ची अगर जीवित रह गई तो उनका भी भविष्य उनकी माँ की तरह त्रासद होगा, जो उन्हें कतई मंजूर नहीं था। जिसे प्रकृति से मानव जीवन का उपहार मिला था उसे समाज की बर्बर सभ्यता ने ड्रेन में पहुँचा दिया। लेखक ने ठोस यथार्थ का अतिक्रमण करते हुए कहानी को कभी न खत्म होने वाला संघर्षगाथा बना दिया। लड़कियों ने गटर जैसे स्थान को अपनी नैसर्गिक सुन्दरता से आबाद चमकीला एवं जीवंत बना दिया–''ड्रेन के अन्दर लड़कियाँ ही लड़कियाँ है। पूरी दुनिया है पर वहाँ सिर्फ लड़कियाँ हैं। तितलियों की तरह उड़तीं, महकती, चिड़यों की तरह गाती और डाल–डाल पर बैठती। झरने की तरह रास्ता बनाती और किसी वाद्य की तरह संगीत को जन्म देती।''[7]

किस प्रकार सरला को बच्ची को जन्म देने के कारण जला कर मार डालते हैं। उनके पति जगदीश्वर को बिरादरी में एक अच्छा रिश्ता मिल गया। दहेज भी अच्छा मिलना था। चिंता सिर्फ इस बात की थी सरला है। दहेज के लालच में उसके पति जगदीश्वर ने सरला का काम तमाम कर दिया। ''जगदीश्वर की बात और किसी ने नहीं घर के 'स्टोव' ने सुन ली। तेल न होने के बावजूद 'स्टोव फटा और इस तरह फटा कि सरला सौ प्रतिशत जल गई।''[8] सरला का पिता आया देखा खूब रोया, भाई आया उन्होंने सरला की राख को प्रणाम किया और चला गया। सब अपने–अपने कामों में व्यस्त हो गये। जो होना था वो हो गया।

जहाँ बेटियों के जन्म को अभिशाप माना जाता हो जन्म लेते ही मार दिया जाता हो, वैसे समाज में इस तरह की घटना कोई बड़ी बात नहीं है। लेखक पुरुषवादी मानसिकता पर व्यंग्य करते हुए लिखा है– ''हे आजकल संसार में रहने वाले आदमियों, तुम्हारे पास और कुछ हो या न हो, पुरूषत्व नहीं है, जबकि 'ड्रेन में रहने वाली लड़कियाँ' लड़कियाँ हैं, पर उनके पास पुरूषत्व हैं।''[9] लड़कियों को 'ड्रेन' में जाने से रोकना है तो समाज की अपनी मानसिकता बदलनी ही होगी।

'अपनी–अपनी पत्नियों का सांस्कृतिक विकास' एक ऐसी कहानी है जो हमारे समाज की स्त्रियों के प्रति दोहरे–चरित्र को उजागर करती हैं। भारत एक साथ कई स्तरों पर तथा कई युगों में जीने वाला देश है। एक तरफ हमारे देश में महानगरों की चकाचौंध है। जिसे हम आधुनिकता मान बैठे हैं, वही भारतीय समाज का एक बड़ा हिस्सा आज भी मध्ययुगीन समय में जी रहा है। इससे अलग आदिवासी समाज है जो आज भी जंगली के तौर पर जीवन गुजार रहे हैं। वजाहत साहब 'मुश्किल काम' कहानी संग्रह की भूमिका में कहते हैं–''मेरे ख्याल से भारत में सार्वजनिक स्तर पर जितना झूठ बोला जाता है, उतना शायद ही किसी देश में बोला जाता हो। देश–प्रेम की जितनी बातें भारत में जितने बड़े स्तर पर और जितने प्रभावशाली लोगों द्वारा की जाती हैं, उन्हें सुनकर लगता है, अगर यह सच होता तो भारत देश स्वर्ग बन चुका होता।''[10] वजाहत जी द्वारा कही गई बात आज के संदर्भ में कितनी प्रासंगिक जान पड़ती है। इन्हीं परिस्थितियों के बीच उनकी कहानी आकार लेती है।

कहानी की शुरूआत कुछ इस तरह से होता है, एक लो बजट फिल्म के निर्माण के बहाने लेखक ने स्त्रियों के सांस्कृतिक विकास में बाधा डालने वाले पुरुष समाज पर व्यंग्य किया है।

जैसा की कहानी के शीर्षक से ही स्पष्ट हो जाता है। माना जाता है कि पति पहले से ही विकसित प्राणी हैं। जिस पर पत्नी की विकास का पूरा दायित्व है। कहानी में फिल्म की रोल के लिए एक अभिनेत्री कम पड़ जाती है, जिसे लेकर निर्देशक परेशान रहता है, मलकानी नाम का एक पात्र है जो ओवरसियर है, जिससे बात करने पर वह शीला जी का नाम सुझाते हैं। जिसके बारे में मलकानी जी का कहना था वह एक बहुत ही प्रगतिशील महिला है, शीला के बारे में बताते हुए वे थकते नहीं थे। ''शीला जी दरअसल महिला–शक्ति, महिला–नैतिकता, महिला–साहस और महिला–सौन्दर्य का प्रतीक जैसी थी''[11] मलकानी जी की बाते महिलाओं के बारे में बड़ी उच्च कोटि की और आदर्श लगती थीं। लगता था मलकानी जी महिलाओं के विकास के लिए बहुत ही प्रगतिशील हैं, आधुनिक विचार के हैं। मलकानी जी और वाचक शीला जी के घर रोल के लिए पहुँचे, पर शीला जी ने मना कर दिया, वे बोली उनके पति डॉ0 दिक्षित मना करते हैं। मलकानी जी वाचक से बोले ''आप समझे वह आदमी शीला जी के सांस्कृतिक विकास में एक बाधा है।''[12] इसी क्रम में वहाँ से वापस आते हुए वे मलकानी जी के घर पहुँचे तो पता चला की मलकानी जी अपनी पत्नी को घर के चाहरदिवारी या बेडरूम से बाहर तक नहीं आने देते, उसे कोई काम होता तो परात पर चमचा बजा कर बुलाया करती।

कहानी में नारियों के सांस्कृतिक विकास को प्रोत्साहित करने का दावा करने वाले मलकानी का जिक्र है, जो खुद अपनी पत्नी को दबाव बना कर रखते है। कहानी में लेखन ने व्यंग्य किया है कि पुरुष कभी भी स्त्री को मनुष्य के तौर पर देखने को तैयार नहीं हैं। उसे वह अपने पैसे तले दबाना ही चाहते है। लेखक ने मलकानी जी के माध्यम हमारे समाज की दोहरे चरित्र वाले पुरुषवादी मानसिकता पर व्यंग्य किया है, जो एक तरफ प्रगतिशील होने का ढ़ोंग करते है, और दूसरी तरफ औरतों को हेय वृद्धि से देखते हैं। कहानी के अंत में वाचक कहता है–''मैं मलकानी के उस वाक्य के बारे में सोच रहा था जो उसने डॉ. दीक्षित के बारे में कहा था– वह आदमी शीला जी के सांस्कृतिक विकास में बाधा है.....और मलकानी?''[13]

निष्कर्षः–

असगर वजाहत ने अपने समय की विभिशिकाओं, विडंबनाओं, विसंगतियों, आदि को अपनी कहानियों का विषय बनाया है। वह समाज के हर उपेक्षित तबके के लोग को अपनी कहानी में जगह दी है। उन्होंने अपनी कहानियों में पितृसत्तात्मक समाज की दोहरे चरित्र को उजागर करने का प्रयास किया है। उसने स्त्रियों की पीड़ा, बेबसी, अत्याचार, ज्यादतियों को अपनी कहानी में अभिव्यक्ति दी है।

संदर्भ–सूची–ग्रंथः

1. रमणिका गुप्ता–'दलित स्त्री का कब्जाकरण' कथादेश, जुलाई 2003, पृ0–63
2. मैं हिन्दू हूँ, (लड़कियाँ), राजकमल पेपरबैक्स, नई दिल्ली, संस्करण–2016, पृ0–131
3. वही, पृ0–127
4. वही, पृ0–128
5. वही, पृ0–131
6. डेमोक्रेसिया, (ड्रेन में रहने वाली लड़कियाँ), राजकमल प्रकाशन नई दिल्ली पहला सं0–2013, पृ0–17, 18
7. वही, पृ0–19
8. वही, पृ0–18
9. वही, पृ0–21
10. मुश्किल काम (भूमिका), किताबघर प्रकाशन, सं0–2016, पृ0–8
11. मैं हिन्दू हूँ (अपनी–अपनी पत्नियों का सांस्कृतिक विकास), राजकमल पेपरबैक्स, नई दिल्ली, सं0–2016, पृ0–46
12. वही, पृ0–50
13. वही, पृ0–51